International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 31-12-2022, Accepted: 30-01-2023, Published: 14-02-2023
Volume 9, Issue 1, 2023, Page No. 55-58

रेखाएँ पाप–पुण्य की: एक जीवन सत्य

डॉ. राजेन्द्र सिंह
सहायक प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, जनता महाविद्यालय, चरखी दादरी, हरियाणा, भारत

सारांश
प्रस्तुत काव्य संग्रह जीवनगत सत्य का उदघाटन ही नहीं करता अपितु जीवन मूल्यों का साक्षात्कार भी करवाता है। यह न केवल व्यक्ति की आंतरिक ऊर्जा को जगाता है अपितु जीवन को प्रगति की ओर भी अग्रसर करता है। कवि समकालीन परिवेशगत विषमताओं और विसंगतियों के प्रति भी आकुल–व्याकुल दिखाई देता है ताकि सामाजिक ताना–बाना सुरक्षित एवं संरक्षित बना रहे। केवल यही नहीं कवि सामाजिक, राजनीतिक अव्यवस्था को दूर करके व्यवस्था स्थापित करने का पक्षधर है फिर चाहे इसके लिए उसे किसी से टकराना ही क्यों न पड़े इसलिए कभी वह सामाजिक हर्षोल्लास की अभिव्यक्ति करता है तो कभी दुःख–दर्द की। इस प्रकार निर्दोष जी जातीयता और साम्प्रदायिक भावना का त्याग करने की बात भी करते हैं, साथ ही समाज में प्रेम और सौहार्द की प्रतिस्थापना की वकालत भी करते हैं तथा अधर्म और पापाचार को त्यागकर धर्म की संस्थापना और पुण्य एवं परोपकार पर बल देते हैं।

मूल शब्दः प्रगतिशील, अनुभूतियाँ, आत्मसाक्षात्कार, त्रासदी, तेवर, व्यंग्यपरक, मसखरे, चापलूस, सात्विकता, विसंगति, भावलोक, उत्तेजना, सिलसिला, छल–छदम, हर्षोल्लास, क्षुब्ध, विघटन, साम्प्रदायिकता, अनायास, समष्टि, अंबार, करिश्मा, अन्तर्मन, पूर्वाग्रह

'रेखाएँ पाप–पुण्य' निर्दोष हिसारी द्वारा रचित काव्य संग्रह है, जिसे अमन प्रकाशन, हिसार द्वारा 1991 ई. में प्रकाशित किया गया। प्रस्तुत कृति कविता, गीत एवं गजल की अनुपम त्रिवेणी है जिसमें कवि ने समकालीन परिवेशगत यथार्थ को अभिव्यक्त किया है। जिसके फलस्वरूप हम कवि निर्दोष हिसारी को समकालीन हिन्दी कविता के हीरक हस्ताक्षर कह सकते हैं जिसमें कवि ने समाज को सतत् संघर्ष के लिए प्रेरित किया है केवल यही नहीं सामाजिक विसंगतियों, विषमताओं का सजीव चित्रण करके मानव जीवन का मार्गदर्शन करते हुए उसे नवीन जीवन दर्शन एवं मार्ग प्रदान किया। इनके काव्य में एक तरफ जहाँ करूणा का सजीवांकन हैं वही दूसरी तरफ आक्रोश भी स्पष्ट दिखाई एवं सुनाई देता है जो मानव को प्रगतिशील भावभूमि की ओर ले जाती है। प्रस्तुत कृति में जीवन मूल्यों के साथ–साथ सृजन की भट्टी में तपी और ढली अनुभूतियाँ हैं जिसमें समकालीन जीवन का अर्जित सत्य है। इनकी कविताएँ आन्तरिक ऊर्जा से उत्पन्न हैं जो सही अर्थो में जीने–मरने का अहसास कराती हैं और उनमें वह प्रतिबद्धता एवं शक्ति है जो अनुभूत जीवन सत्य की अभिव्यक्ति करती है। इस प्रकार इनके काव्य में आत्मसाक्षात्कार ही नहीं अपितु मानवीय साक्षात्कार भी दृष्टव्य है। जीवन सत्य का उद्घाटन करते हुए इन्होंने कहा है–

''नगर के चौक में सजते
हमारे जन्म दिन मनते
अगर मजबूर का निशिदिन लहू हमने पिया होता
तुम्हारी तर्ज पर जीवन गहर हमनें जिया होता।''[1]

इन्होंने समाज पर पड़ रहे राजनीतिक प्रभाव एवं शोषण जनित मानवीय पीड़ा को अपने काव्य में अभिव्यक्त किया है। इस प्रकार कवि की दृष्टि पूरी सजगता के साथ अमानवीय तत्त्वों पर प्रहार करती हैं। वह अपने नित्य प्रति जिन्दगी के बीच त्रासदी में जीते हुए सामान्य आदमी की असामान्य स्थितियों से जूझता है तब उनका तेवर तीव्र एवं व्यंग्यपरक हो जाता है/ देखिए–

'हो सियासत जहाँ या अदब का जहाँ
हैं सभी ये जहाँ मसखरों के लिए।''[2]

आज राजनीति में आपाधापी एवं स्वार्थ का बोलबाला है। राजनीतिक मूल्य केवल दिखावा मात्र रह गए हैं। राजनेता जनसामान्य की पीड़ाओं उनके कष्टों एवं विपत्तियों पर झूठे आँसू बहाते हैं। आपत्तियों की आग पर अपनी रोटी सेकते हैं।
इस प्रकार हम कह सकते हैं कि कवि ने जीवन में सत्य से साक्षात्कार किया और अपने अनुभव के आधार पर कहा कि चाहे राजनीति हो या साहित्य इसमें वहीं लोग महत्त्व प्राप्त करते हैं जो या तो मसखरे हैं या चापलूस। आज सत्य एवं सात्विकता को महत्व नहीं दिया जाता। राजनीतिक सत्य का उद्घाटन करते हुए कवि कहता है–

तुम्हारी तर्ज पर जीवन अगर हमने जिया होता
हम कबीरा के सबद को गाँठ बाँध घूमते थे
सत्य का उद्घोष करते फांसियों को चूमते थे
उस घड़ी दरबार में तुम चुटकलों के बीरबल बन
अकबरी अभिमान को थे तुष्ट कर कर पा रहे धन।''[3]

कवि समकालीन परिवर्तित एवं विषम व्यवस्था के प्रति भी आक्रोशित दिखाई देता है और मानवीय करूणा का आधार लेकर व्यवस्था पर कठोर प्रहार करता है तथा पाठक को युगीन विसंगतियों से अवगत करवाता हुआ कहता है–

''पुण्य यहाँ मिलता है बदनाम अटारी पर
पाप यहाँ मिलता है मस्जिद और शिवालय में
जो दागी हैं उस चादर को उजली कहते
और बाँटते वेद यहाँ ऋषि मदिरालय में
उलझ गया हूँ देख जगत का ढंग निराला।''[4]

इस प्रकार विषमताओं और विसंगतियों ने कवि के भावलोक को विचलित कर दिया है। आज समाज में जीवन मूल्यों में विघटन दिखाई दे रहा है। जो मानव एवं समाज के लिए घातक है। कवि इन सबसे बेखबर नहीं है। उसकी संलग्नता और मानसिकता इस विकृत व्यवस्था से टकराने के लिए उद्धत है। अतः जीवन–मूल्य से सम्पृक्तता कवि के अन्तस में अनेक प्रश्न उत्पन्न करती है जो उनकी संवेदनपारक मानवीय दृष्टि को ही प्रतिफल है। देखिए–

''जादू वह जो सिर चढ़ बोले
रूप वहीं जो पागल कर दे
नयन कि जिनमें लाज भरी हो
गीत यही जो घायल कर दें।''[5]

कवि वैचारिक उत्तेजना के आधार संवेदना को जितनी तीव्रता से ग्रहण करता है तो उनका कवि कर्म भी उतना ही दमदार होता है। ऐसी स्थिति में वह सहृदय के मानस पटल पर छा जाता है। आज राजनीति में जो छल–छदम और मकारी आ गई है उससे लोग परेशान हैं। सामान्य व्यक्ति के साथ अन्याय हो रहा है एवं उसका शोषण किया जा रहा है। भले ही आज हम नई सदी में पहुंच गए हैं। जमाना भी नया है लेकिन यह सिलसिला आज भी लगातार रूप से जारी है। देखिए–

''जब अजल से ही चलन है खून पसीना बेकसों का
क्यों स्वायत तोड़ दे वो बीसवीं चाहे सदी हो।''[6]

साहित्य, समाज और देश का अटूट एवं गहन सम्बन्ध होता है। अतः कवि ने मानव एवं समाज के दुःख दर्द, हर्षोल्लास आदि सभी को अपने काव्य में अभिव्यक्त किया है और सामान्य आदमी की भूख प्यास के प्रति संवेदना प्रकट करते हुए कहा है–

भूख खायी और पी है तश्नगी हमने
खूब से है खूबतर जी जिन्दगी हमने।''[7]

कवि मानव जीवन में जब समस्याएं एवं अंधकार देखता है तो उनकी कविताएँ उन्हें चुनौती देती दिखाई देती हैं। जो कवि के स्वतंत्रचेता एवं स्वाभिमानी होने का परिचय देती है क्योंकि मानवीय पीड़ाओं से क्षुब्ध होकर कवि अभिव्यक्ति का खतरा उठाता है–

''कटु यथार्थ ही जिया उम्र भर, मेरा परिचय नहीं।
मेरे दिल का सदन भरा है, पीड़ाओं के कोलाहल से।''[8]

अव्यवस्था और मूल्यों के विघटन से यह पीड़ा आज प्रत्येक व्यक्ति के अन्तस में उत्पन्न हो गई इसलिए कवि निर्दोष जी कहते हैं कि मिथ्या जातीयता एवं साम्प्रदायिकता की भावना का त्याग करके समाज में प्रेम और सौहार्द भावना को सुदृढ़ करके परिवार एवं देश का उत्थान करने में सहयोग दें। असामाजिक तत्त्वों से बचकर वस्तुस्थिति को पहचान कर जीवनयापन करें।
इस प्रकार कवि पीड़ा की अनुभूति कर चिन्तन करता है और आँसुओं में बोलता है क्योंकि दर्द जब चेतना का अंग बन जाता है तब अनायास ही काव्य सरिता का उद्भव होता है। इस प्रकार निर्दोष का काव्य पीड़ा का काव्य बन जाता है। जो चेतना पर अधिकार करके जन मानस क अन्तर्मन को छू लेता है। कवि के शब्दों में

''आँखों में अश्क सीने में धुँआ सा है
आदमी का दिल है दर्द का बसेरा क्यों ?''[9]

समसामयिक यातनाओं ने कवि की संवेदनशीलता को बढ़ाया। इनके काव्य के अध्ययन से यह लगता है कि यह दुःख दर्द कवि का व्यक्तिगत नहीं है अपितु समष्टिगत है और यही दर्द इनकी सृजनात्मकता को उर्वरता प्रदान करता है। इस प्रकार कवि पीड़ागत यथार्थ को अपनी संवेदनागत भावभूमि पर खरा उतारकर और नवीन चिन्तन प्रदान कर उसे मानवीय सरोकारों से सम्पृक्त करता है। इनके काव्य की पीड़ा आम जनमानस की पीड़ा है, जो व्यवस्थागत विसंगतियों के मध्य रहकर उन्हें अनुभूत करता है और भीतर ही भीतर सुलगता रहता है। यही अकुलाहट, पीड़ा इनके काव्य के रूप में परिणत हो गई। हृदय चाहता है नामक कविता ने इनका यह स्वर देखिए–

लपट ही लपट हों, इधर हों उधर हों
कि मन लानतों पर, कहर हों कहर हों
बहुत सह चुके हो उठाओ भुजायें
कि जालिम इरादे कुचल दो जिधर हों
बने दर्द शोला जहन आग उगले
हृदय चाहता है हृदय चाहता है।''[10]

इस प्रकार सामायिक यातनाओं के प्रति रचनाकार की संवेदनशीलता देखते ही बनती है। कवि व्यक्तिगत दुःख–दर्द को समष्टिगत दुःख दर्द के रूप में देखता है। कवि की व्यवस्थागत विषमता एवं तत्कालीन परिवेश में सीधी टकराहट एवं आक्रमकता है। इस तरह ध्वंस एवं नाश की अभिलाषा में निर्माण समाहित है लेकिन इसके लिए संघर्ष अनिवार्य हैं। कवि उक्त शाश्वत सत्य का उद्घाटन करते हुए कहता है–

''संघर्ष अटल है होना ही है देते इतिहास गवाही
सदा हुआ करती है जग में निर्माणों से पूर्व तबाही।''[11]

अतः कवि सामाजिक दशा से अवगत होकर उसे नवीन दिशा देना चाहता है और सामाजिक मूल्यों के विघटन के प्रति भी चिन्तित दिखाई देता है। इनकी रचनाएं केवल व्यष्टि एवं समष्टि के इर्द–गिर्द नहीं घूमती, उनके द्वन्द्व को ही प्रदर्शित नहीं करती अपितु सामाजिक सरोकारों के साथ व्यक्ति के विकास की सार्थक पहल भी करती है। कवि ने बताया कि भारत के आजादी के लिए अनेकों देशभक्तों ने अपना बलिदान दिया। देश के लिए अपना सर्वस्व अर्पित कर दिया लेकिन उन्हें आजादी के बाद भी त्रासदी कचोटती है परन्तु लोग स्वार्थ के वशीभूत होकर समाज के लिए विष की बेल बोते हैं–

''पल–पल जहर पिया था जिसने
बूँद–बूँद निज रक्त दिया था
जिनके बलिदानों ने इसके अंधकार को सूर्य किया था
उसी बाग में बोलो कैसे इतनी विष बेलें उग आई
यह तो हमें सोचना होगा, हमें सोचना होगा साथी।''[12]

तत्कालीन व्यवस्थागत विषमताओं और विसंगतियों ने कवि की अन्तर्रात्मा को झकझोर दिया जिससे इन्होंने जीवन–मूल्यों के विघटन की सत्यता को अपना वर्ण्य विषय बनाकर पाठक को सोचने के लिए विवश कर दिया। युगीन परिवेश की स्थिति का यथातथ्यांकन करते हुए इन्होंने कहा है–

''है श्रवण को ढो रहे माता पिता बहंगी उठाए,
दान याचक दे रहे हैं कर्ण लेते मुँह छिपाए
सूर्य का आलोक लज्जित एक बदली की घटा से
सौम्यता लज्जित हुई पाखण्ड की कपटी अदा से।''[13]

समाज में जीवन–मूल्यों को विघटन यत्र–तत्र सर्वत्र देखने को मिलता है। छल, कपट, फरेब, झूठ, षडयंत्र, वैर–विरोध की भावना तभी पैदा होती है जब सही मूल्यों की जगह गलत मूल्यों का समर्थन होता है। परिवर्तित परिवेश के मूल्यों का अवमूल्यन देखिए–

''आज कल यमुना किनारे कंस गोपी रास करते
और रावण अब अवध प्रासाद में हैं वास करते
मानिनी राधा विकल और साध्वी सीता निराश
पीर में डूबे कन्हैया राम हैं बैठे हताश।''[14]

इन्होंने समाज में परिवर्द्धित होते धार्मिक पाखण्ड के प्रति भी चिन्ता व्यक्त की है क्योंकि धर्म की आड़ में धर्मगुरूओं का विकृत चरित्र भी दिन प्रतिदिन सामने आ रहा है। आज सत्यता मूकदर्शी है और झूठ एवं छल–प्रपंच सिरचढ़ कर बोल रहा है। धर्म के नाम पर शोषण जारी है। आज लोक रक्षक ही लोक भक्षक बने दिखाई दे रहे हैं परन्तु सत्यगामी लोग फाँसी लगाने के लिए तत्पर हैं–

''आदमी ने जाल कुछ ऐसा रचा है,
जिन्दगी उपहास बनकर रह गई है।
धर्म से केवल निकाली रूढ़ियाँ ही
असलियत फाँसी लगाकर मर रही हैं।''[15]

मानव जीवन में हो रहे पापाचार एवं व्यभिचार को देखकर कवि आहे भरने लगता है क्योंकि चारों ओर अधर्म एवं असत्य का बोलबाला है। कवि इसके स्थान पर धर्म एवं सत्य की स्थापना करना चाहता है, जिसमें सभी लोग सुखपूर्वक जीवनयापन कर सके–

''ला रहा हूँ एक ऐसा युग सुहाना
जब सत्य, शिव, सुन्दर यहाँ होगा मुखर।
भीख माँगेगा नहीं फिर सत्य दर–दर।''[16]

आज व्यक्ति के दर्द को जानने वाले अनुभूत करने वाले बहुत कम लोग हैं। कवि ने अपने गीतां में इसी दर्द की अभिव्यक्ति की है उसके लिए वेदशास्त्र उसकी तपस्या और उसके दर्द भरे गीत ही हैं–

''मेरे दर्द वेद को सुन ले
ऐसा इक इंसान न पाया।
ऋर्षियों का सा कर मैंने
कोई भी वरदान न पाया।''[17]

कवि का नायक जीवन–लीला एवं संघर्षों से पराजित हुआ लगता है जिससे उसके जीवन में दुःखों के अंबार लगे दिखाई देते हैं। यथा–

''मेरे रामचरित मानस का अंतिम सर्ग महादुखमय है।
टूटी साधें, सूखी आँखें, मिली नही नायक को जय है।''[18]

कवि भली भाँति परिचित है कि धर्मशास्त्र यथास्थितिवादी होते हैं। इनसे जीवन में कोई परिवर्तन एवं विकास नहीं होता इसलिए पवित्र ग्रंथों की अपेक्षा वह जीवन में सुख–शांति एवं उन्नति की कामना करता है–

''मुमकिन हो अगर तो दो मुकम्मिल जिन्दगी हमको
ये वेद पुराण, ये मुकद्दस किताब रहने दो।''[19]

कवि पाठक को कर्मशीलता की शिक्षा देता है और भाग्यवादियों का विरोध करता है। वह कहता है कि जीवन में संघर्ष करने वाला व्यक्ति ही सफल होता है। जीवन के यथार्थ को अभिव्यक्त करते हुए इन्होंने कहा है–

''ठोस हकीकत है यह दुनिया, भाग्य भरोसे क्या होता है,
जो जूझेगा वह पा लेगा, खो देगा यह जो सोता है
कोई देव कभी आकर के अपना वर्तमान बदलेगा
कोई झोंपड़ी की पीड़ा को किसी महल का दर्प सुनेगा
इस झूठी आशा में हमने कितने युग बर्बाद कर दिये।''[20]

वह सोचता है कि यह विडम्बना हमें कब तक भोगनी होगी ? देवता अब कोई करिश्मा नहीं दिखलाते। जीवन की इस चुनौती का मुकाबला धर्म के नाम पर अंधविश्वासों से नहीं बल्कि बौद्धिक क्रांति से होगा। मानवीय रिश्तों को तोड़ने वाली उत्पीड़ित जिन्दगी के खिलाफ यह रचनात्मक स्वर में संभावनाओं की जबरदस्त कोशिश है। उत्पीड़न और अकेलेपन के बीच भी कवि की आस्था और आशापरक दृष्टि निर्माण के दायित्व को नहीं भूली है–

''निकल कर अंधेरों से देखो तो निर्दोष
हमें कुछ उजाला नजर आ रहा है।''[21]

कवि लोक–कल्याण की कामना करता है और सामाजिक कष्टों का निवारण करके अज्ञान के स्थान पर ज्ञान का प्रकाश विकीर्ण करना चाहता है–

हर तरफ है मुर्दनी तू ताजगी बन जा
जगमगायेगा अंधेरा तू रोशनी बन जा।''[22]

इनकी 'समयः एक आत्मकथ्य' एक लम्बी कविता है जिससे उसका बहुआयामी चिन्तन और अध्ययन मुखरित हुआ है। इस कविता का वर्ण्य–विषय अत्यन्त व्यापक एवं विस्तृत है। इसमें समाज के साथ रागात्मक सम्बन्ध को अभिव्यक्त किया है। इस कविता में जीवन दर्शन की गंभीर अनुभूति और संवेदनाओं की तरलता स्पष्ट रूप में दिखाई देती है। यह कविता कवि की सृजनात्मक शक्ति की मार्मिक अभिव्यक्ति है।
'दर्द' निर्दोष के गीतों की शक्ति है, इश्क उसका तत्त्व है, सहजता उसका सौन्दर्य है। उसके गीत आज के संदर्भ में सच–झूठ को रेखांकित करते हैं। इन्होंने पाप–पुण्य को परिभाषित करते हुए कहा है–

''साँच पर ही आँच आई, हो गया बदनाम
झूठ देखो पाँव चलता, पल रहा अविराम।''[23]

कवि ने अनुभूत किया कि आज समाज में पापी और नीच लोग प्रसिद्धि पा रहे हैं लेकिन पुण्य–कर्म करने वाले लोग गुमनामी के अंधकार में खो गए हैं। ये पापी और नीच–कर्म करने वाले लोग अपने माथे पर चन्दन का टीका लगाकर दिखावा करते हैं। कवि ऐसे राजनीतिक और धार्मिक लोगों का पर्दाफाश करना चाहता है–

''दूध नहायो! अपना दिल तो देखों जिसमें
बंदी कितनी पूनम, कितनी संध्यायें हैं,
कभी गौर से अपने माथे पर भी देखो
उस पर पाप–पुण्य की कितनी रेखाएं हैं।''[24]

आज देश में चारों तरफ भ्रष्टाचार का बोलबाला है। भ्रष्टाचारियों ने लोगों का शोषण कर समाज की नींव को खोखला कर दिया जिससे लोगों में गरीबी बढ़ी है। नेता एवं शासक वर्ग के लोग इस गरीबी का हटाने के लिए बड़ी–बड़ी बातें करते हैं लेकिन वास्तविकता कुछ और ही है, यह कवल नारा बनकर रह गया है–

''गरीबी हटाओ, गरीबी हटाओ,
कहा जा रहा है सुना जा रहा है।''[25]

गरीबी की नाक में नकेल डालने वाला कोई नहीं है। लोक सेवा के नाम पर शासन सत्ता वर्ग के लोग मालिक बन बैठते हैं और लोगों का शोषण करने में कोई कसर नहीं छोड़ते। कवि ने इस सत्य का उद्घाटन करते हुए कहा है–

''जनसेवक बन सत्ता लेते, सत्ता लेकर मालिक हैं
लोगों की पीठों पर ये नित ही काठी कसते हैं।''[26]

इस परिदृश्य को देखकर कवि का मन विद्रोही हो जाना चाहता है और शोषक वर्ग से टकराना चाहता है। कवि को जन साधारण की चिन्ता है। वह कहता है–

''आजकल तो आदमी होना हुआ अभिशाप जग में
और वह भी आम होना तो हुआ है पाप जग में।''[27]

यही समाज वैषम्य कवि के अन्तर्मन को पीड़ा पहुँचाता है, यही पीड़ा मानवीय करूणा को देखकर आक्रोश में परिवर्तित दिखाई देती है और यही आक्रोश में परिवर्तित दिखाई देती है और यही आक्रोश अन्तरमन की गहराईयों में रच बस कर मानवीय पीड़ा के साथ भाषा का सामर्थ्य लेकर अभिव्यक्त हुआ है। कवि गजल को सामान्य जन की वाणी कहता है। वह भाषा में बोलचाल की प्रवृत्ति को महत्त्व देता है और हिन्दी, उर्दू के भेद को भी अंगीकार नहीं करता है। वह इस भेद को मानने वाले को पूर्वाग्रह एवं साम्प्रदायिक भेदभाव से ग्रस्त स्वीकार करता हैं क्योंकि अरबी–फारसी के शब्दों का हिन्दी में प्रयोग भाषा–विकास में सहायक है। इनकी शायरी में आम आदमी की बोलचाल की भाषा का प्रतिरूप देखते ही बनता है–

''एक वो भी हैं घुमाकर बात जो करते
बात करने की तरह की शायरी हमनें।''[28]

इस प्रकार गजल साहित्य को प्रभाव ने हिन्दी के गीत नवगीत को सरसता एवं संघनता प्रदान की है जिससे हिन्दी शब्द–भण्डार में अभिवृद्धि हुई है। इस प्रकार कवि ने अपने तथ्य स्पष्टता से प्रकट किए हैं और रात्रि के समय पसरे सन्नाटे को प्रकट करते हुए कवि ने कहा है–

''साँप के सूँघें हुए से मौन हैं घर
सूर की आँखों सरीखें बंद हौं दर।''[29]

'और यह माहौल' कविता में कवि ने अध्यापिका जीवन से अपने जीवन्त बिम्बों के चित्रित करते हुए कहा है–

''और सामने
झिलमिल करते सप्तर्षि से
यों लगते हैं
अध्यापक ने जैसे
कुछ अति उदण्ड छात्रों को
कान पकड़कर ऊठक–बैठक का दण्ड दिया हो।''[30]

निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं कि निर्दोष की कविताएँ संवेदना से उपजी हैं जो केवल कल्पना की नहीं संकल्प की कविताएँ हैं। इनमें ऐसे भविष्य की कल्पना का संकल्पनात्मक स्वर है जहाँ सत्य को भीख न माँगनी पड़े। इस प्रकार कवि सामाजिक, राजनीतिक विसंगति एवं विषमताओं को दूर समाज में सुख–शांति की स्थापना करके प्रेम–सौहार्द भाव पैदा करना चाहता है ताकि सामाजिक ताना–बाना सुरक्षित रह सकें।

संदर्भ सूची

1. निर्दोष हिसारी, रेखाएँ पाप–पुण्य की, पृ0 50
2. वही, पृ0 111
3. वही, पृ0 50
4. वही, पृ0 54
5. वही, पृ0 52
6. वही, पृ0 122
7. वही, पृ0 127
8. वही, पृ0 109
9. वही, पृ0 125
10. वही, पृ0 80
11. वही, पृ0 48
12. वही, पृ0 77
13. वही, पृ0 56
14. वही,
15. वही, पृ0 74
16. वही,
17. वही, पृ0 30
18. वही, पृ0 25
19. वही, पृ0 126
20. वही, पृ0 48
21. वही, पृ0 120
22. वही, पृ0 123
23. वही, पृ0 39
24. वही, पृ0 157
25. वही, पृ0 120
26. वही, पृ0 117
27. वही, पृ0 76
28. वही, पृ0 127
29. वही, पृ0 53
30. वही, पृ0 19